National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2016;1(6): 11-14
© 2016 NJHSR
www.sanskritarticle.com
Received: 19-05-2016
Accepted: 20-05-2016

मोनिका
शोधकर्त्री, संस्कृत विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय,दिल्ली

Correspondence:
मोनिका
शोधकर्त्री, संस्कृत विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय,दिल्ली

कैयट एवं हरदत्तमिश्र – समास प्रकरण के सन्दर्भ में

मोनिका

महर्षि पाणिनि की अष्टाध्यायी संस्कृत व्याकरण की नींव है। वार्त्तिककार कात्यायन एवं महाभाष्यकार पतञ्जलि ने इस नींव को और अधिक सुदृढता प्रदान की है। सामान्यतः नींव पर निर्माण कार्य सीमित कालावधि में परिपूर्ण हो जाता है। परन्तु इस नींव पर हजारों वर्षों से अजस्त्र-रूपेण निर्माण होता रहा है। मुनित्रय प्रदत्त धरोहर को संभालने वाले परवर्ती वैयाकरणों में कैयट व हरदत्तमिश्र भी एक हैं। कैयट ने महाभाष्य पर प्रदीप नामक टीका लिखी जिसने वास्तविक प्रदीप की भांति अपनी लौ से अनेक टीकाओं रूपी दीपों को प्रज्जवलित कर स्वयं को उनकी नींव सिद्ध किया। हरदत्तमिश्र ने महाभाष्य, वाक्यपदीय, न्यास एवं प्रदीप को आधार बनाकर अपनी नवोन्मेषशालिनी प्रखर बुद्धि से काशिकावृत्ति को एक नवीन आयाम प्रदान कर पदमञ्जरी नामक टीका का प्रणयन किया। यद्यपि कैयट व हरदत्त मिश्र सामान्यतः पाणिनि, पतञ्जलि और भर्तृहरि जैसे व्याकरण शास्त्र के अधिकृत एवं पथिकृत आचार्यों द्वारा निर्दिष्ट उपस्थापनाओं को ही सिद्धान्ततः स्वीकारते हैं परन्तु उन सिद्धान्तों के अर्थपूर्ण व्याख्यान के साथ ही अपनी मौलिक उद्भावनाओं में भी वे अप्रतिम हैं व प्रदीप और पदमञ्जरी के माध्यम से व्याकरणिक सिद्धान्तों को नई गति प्रदान करते हैं।

समास के वैशिष्ट्य को देखते हुए कैयट व हरदत्तमिश्र ने उस पर विस्तार व गहनता से चिन्तन किया है। समास के सन्दर्भ में प्रदीप व पदमञ्जरीकार दोनों ही ग्रन्थ अपने पूर्ववर्तियों के सम्पूर्ण सार को समाविष्ट करते हैं तथा यथावसर पूर्ववर्तियों के सकारात्मक एवं नकारात्मक पक्ष को भी विश्लेषणात्मक ढंग से प्रस्तुत करते हैं।

प्रदीप व पदमञ्जरी के समास प्रकरण के सूत्रों का तुलनात्मक पर्यालोचन करने से विदित होता है कि अनेक स्थानों पर दोनों ही ग्रन्थों में समान विचार व्यक्त किया गया है। हरदत्तमिश्र कैयट की शब्दावली को बहुधा अक्षरशः अपने ग्रन्थ में उद्धृत करते हैं। कैयट के साक्षात् व परोक्ष उभयविध उल्लेख भी उनके ग्रन्थ में कई स्थानों पर पाए जाते हैं। किन्तु हरदत्तमिश्र ने चाहे कैयट के कितने ही वचनों से अपनी व्याख्या को विभूषित क्यों न किया हो पर उनका व्याकरणशास्त्र को अपना योगदान भी कुछ कम नहीं है।

हरदत्तमिश्र जहाँ-जहाँ प्रदीप के वचनों का आश्रय लेते हैं वहाँ-वहाँ कुछ न कुछ अपनी छाप भी अवश्य छोड़ते हैं। कहीं उनकी शब्दावली में उपयुक्त संशोधन व परिवर्तन, कहीं परिवर्धन, कहीं खण्डन और कहीं नानाविध अन्यान्य सूचनाओं को भी साथ-साथ जोड़ते चले जाते हैं। इसी कारण अनेक स्थानों पर प्रदीप व पदमञ्जरी में भेद भी दृष्टिगोचर होते हैं। ये भेद कुछ सूत्रों, वार्तिकों तथा उनकी व्याख्या आदि में उपलब्ध होते हैं। यथा -

अव्ययं
विभक्तिसमीपसमृद्धिव्यृद्ध्यर्थाभावात्ययासम्प्रतिशब्दप्रादुर्भावपश्चाद्यथाऽनुपूर्व्ययौगपद्यसादृश्यसम्पत्तिसाकल्यान्तवचनेषु[1] सूत्र में पदमञ्जरीकार ने काशिका के अनुकरण के आधार पर समृद्धिः, व्यृद्धि इत्यादि अव्ययों के अर्थों को स्पष्ट किया है। जबकि प्रदीपकार ने इन अव्ययों के अर्थों को स्पष्ट नहीं किया है। यावदवधारणे[2] सूत्र द्वारा नित्य अव्ययीभाव समास का विधान किया गया है।

किन्तु यावदमन्त्रं ब्राह्मणान् आमन्त्रयस्व उदाहरण के लौकिक विग्रह में यावत् और तावत् शब्दों का प्रयोग किया जाता है। यहाँ शङ्का होती है कि इस नित्यसमास का ऐसा विग्रह कैसे दिखाते हैं? कैयट के अनुसार यावदवधारणे इस सूत्र में यावत् इस अव्यय पद का ग्रहण किया गया है और यावन्त्यमत्राणि इस उदाहरण वाक्य में अनव्यय (जो अव्यय नहीं) यावत् शब्द के द्वारा विग्रहवाक्य प्रदर्शित किया गया है, नहीं तो अव्यय के साथ नित्य समास होने के कारण यावन्त्यमत्राणि ऐसा विग्रहवाक्य सम्भव नहीं था।[3] हरदत्त मिश्र भी इससे सहमत हैं। वे इसे और अधिक स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि यावत् एक अव्यय है और यावत् (यद्+वतुप्) यह तद्धितान्तप्रत्ययान्त (वतुप् तद्धित प्रत्यय) शब्द भी है। इसलिए नित्यसमास होने पर भी यहाँ जो ' यावदमत्र' इस समस्त पद का यावन्त्यमत्राणि ऐसा विग्रह वाक्य दिखाया जाता है यह तद्धितप्रत्यान्त (यद्+वतुप्=यावत्) के साथ प्रदर्शित किया जाता है।[4]

अक्षशलाकासंख्याः परिणा[5] सूत्र पर पदमञ्जरी में ' पञ्चसु त्वेक त्वेकरूपासु जय एव भविष्यति। अक्षादयस्तृतीयान्ताः पूर्वोक्तस्य यथा न तत्। कितवव्यवहारे च एकत्वेऽक्षशलाकयोः॥[6] श्लोक पढा गया है जो कि प्रकृत सूत्र के पूर्ण स्पष्टीकरण में सहायक है। प्रदीप में यह श्लोक नहीं है केवल अन्तिम पङ्क्ति के भाव वाले वार्तिक अवश्य हैं।[7]

यस्य चायामः[8] सूत्र में कैयट लक्षणेनाभिप्रति आभिमुख्ये इस सूत्र से आ रही लक्षणेन इस पद की अनुवृत्ति को अनावश्यक मानते है। उनके अनुसार यहाँ उपमानभाव और उपमेयभाव में यह समास हो रहा है। न्यूनगुण उपमेय होता है तथा परिपूर्णगुण उपमान होता है। सम्पूर्णगुण की सन्निधि होने पर न्यूनगुण असद्गुण की तरह जान पड़ता है, अतः सामर्थ्यवश प्रकर्षगति ली जायेगी। प्रकृष्ट और अप्रकृष्ट सन्निधि होने पर कार्य के साथ प्रकृष्ट का सम्बन्ध होता है, इतर के साथ नहीं। यहाँ प्रकृष्ट आयाता गङ्गा है, वाराणसी नहीं, अतः गङ्गा के साथ ही समास होगा, वाराणसी के साथ नहीं।[9] किन्तु हरदत्त यहाँ लक्षणेन की अनुवृत्ति आवश्यक मानते है। उनके अनुसार यदि यहाँ लक्षणेन की अनुवृत्ति नहीं की जाती तो जिसका विस्तार या दीर्घता बताई गई है उसके अर्थ में समास होने लगता है। जैसे – गाङ्गायाः आयामः – गङ्गा की दीर्घता या विस्तार। इस अर्थ में अनुगङ्गम् बनने लगता जोकि उचित नहीं है।[10]

कैयट कालाः[11] सूत्र को व्यर्थ मानते हैं। उनका पक्ष है कि अत्यन्तसंयोगे च सूत्र में क्तान्त अथवा अक्तान्तरूप विशेष वचन न होने से इस सूत्र से ही समास का विधान हो जाएगा। अतः कालाः इस पृथक् योग द्वारा समास का विधान अनर्थक है।[12] कैयट के अनुसार अत्यन्तसंयोगे में काल का सम्बन्ध इष्ट है। अतः काला अत्यन्तसंयोगे ऐसा ही सूत्र बनाना चाहिए। अर्थात् योगविभाग अनर्थक है। किन्तु हरदत्त कैयट द्वारा प्रदत्त विचार के पक्ष में नहीं हैं। उनका मत है कि दोनों सूत्रों द्वारा प्रतिपादित समास सर्वथा विपरित है। पहले में जहाँ संयोग अविवक्षित है तो दूसरे में अत्यन्त संयोग विवक्षित है। कालाः सूत्र से क्तप्रत्ययान्त सुबन्त के साथ समास होता है तो अत्यन्तसंयोगे च सूत्र में केवल सुबन्त के साथ ही समास होता है। इसलिए दोनों सूत्रों का क्षेत्र पृथक्-पृथक् होने के कारण इनका योगविभाग किया जाना आवश्यक है।[13]

पूर्वसदृश्यसमानार्थकलहनिपुणमिश्रश्लक्ष्णैः[14] सूत्र द्वारा तृतीयान्त का पूर्व, सदृश, सम, ऊनार्थ, कलह, निपुण, मिश्र एवं श्लक्षण सुबन्तों के साथ तत्पुरुष समास कहा गया है। यहाँ शङ्का होती है कि सूत्रस्थ मिश्र पद से क्या केवल मिश्र पद का ग्रहण है अथवा सोपसर्ग मिश्र पद का भी ग्रहण होगा? इस विषय पर महाभाष्य, काशिका व प्रदीप में कोई विचार नहीं रखा गया है। इस पर केवल पदमञ्जरीकार ने लिखा है – मिश्रग्रहणे सोपसर्गस्यापि ग्रहणम्' अर्थात् यदि ' मिश्र' शब्द उपसर्ग से युक्त हो तो भी तृतीयान्त के साथ उसका समास (तत्पुरुष) हो जाएगा। जैसे' संमिश्र' आदि।इसमें' मिश्रश्चानुपसर्गमसन्धौ' यह सूत्र ज्ञापक है।[15]

कैयट ने तुल्यन्याय होने से अन्नेनव्यञ्जनम्[16] एवं भक्ष्येण मिश्रीकरणम्[17] दोनों सूत्रों पर एक साथ विचार किया है। जबकि हरदत्त ने दोनों सूत्रों पर पृथक्-पृथक् विचार किया है। इनके अनुसार दोनों का क्षेत्र पृथक्-पृथक् है। अन्न और व्यञ्जन कोमल पदार्थ हैं जबकि भक्ष्य और मिश्रीकरण (जिनमें खाद्य-पदार्थ मिश्रित किया जाता है) दोनों ही कठोर पदार्थ हैं।

पात्रेसमितादयश्च[18] सूत्र में हरदत्त का कैयट की अपेक्षा स्वर विषयक ज्ञान परिलक्षित होता है। हरदत्त के अनुसार पात्र, समित आदि शब्दों का समास क्षेपे सूत्र से ही सिद्ध है। इस स्थिति में इनका पुनः पाठ युक्तारोही आदि परिग्रहण के लिए है जिससे पूर्वपद का आदि उद्दात्त हो सके।[19]

कैयट व हरदत्त के अनुसार अनेकमन्यपदार्थे[20] सूत्र में अनेक पद का प्रयोजन है कि दो से अधिक पदों का भी बहुव्रीहि समास हो जाए। यथा – सुसूक्ष्मजटकेशेन सुगजाजिनवाससा। समन्तशितिरन्ध्रेण द्वयोर्वृत्तौ न सिध्यति ॥ इसमें सुष्ठु सूक्ष्माः जटाः केषाः यस्य सः तेन – यहाँ चार पदों का बहुव्रीहि है। प्रदीप में प्रस्तुत श्लोक का केवल पूर्वार्ध ही उद्धृत है। पदमञ्जरीकार ने श्लोकपूर्ति के लिए उत्तरार्ध को जोड़ दिया है। महाभाष्यकार नेपूर्वापराधरोत्तरमेकदेशिनैकाधिकरणे,[21] अर्धं नपुंसकम्,[22]द्वितीयतृतीयचतुर्थतुर्याण्यन्यतरस्याम्[23]सूत्रों प्रत्या-ख्यान किया। प्रस्तुत सूत्रों के प्रत्याख्यान में

वार्तिककार कात्यायन मौन हैं। भाष्यकार का मत है कि एकदेशी तत्पुरुष समास के लिए बिना भी अर्धपिप्पली, पूर्वकायः द्वितीयभिक्षा इत्यादि रूप समानाधिकरण तत्पुरुष, जो कि कर्मधारय कहलाता है उससे ये रूप सिद्ध हो जायेंगे। कैयट भी भाष्यकार से सहमत हैं किन्तु पदमञ्जरीकार ने गौणत्वात् सामानाधिकरण्स्य विशेषण समासो न किल स्यादित्यमारम्भः[24] कहकर भाष्यकार व प्रदीपकार दोनों के मत का खण्डन किया है। भट्टोजिदीक्षित ने भी हरदत्त का मत उचित माना है, कैयट व पतञ्जलि का नहीं। इससे स्पष्ट है कि हरदत्तमिश्र पदमञ्जरी के माध्यम से व्याकरणिक सिद्धान्तों को नई गति प्रदान करते हैं।

कुछ स्थानों पर प्रदीप में पदमञ्जरी की अपेक्षा अधिक स्पष्टता है। यथा पाणिनि ने अव्ययं विभक्ति ...वचनेषु[25] सूत्र एवं यथाऽसादृश्ये दोनों ही सूत्रों में यथा अव्यय का प्रयोग किया है। यहाँ शङ्का होती है कि अव्ययं विभक्ति ... वचनेषु सूत्र द्वारा पहले ही यथा और सादृश्य के अर्थ में अव्यय के समासिकरण की संस्तुति की गई है इसलिए यह अलग से कहने की क्या आवश्यक्ता है कि अव्यय यथा का असादृश्य के अर्थ में समास होगा जबकि हम इसे अव्ययं विभक्ति ..... वचनेषु सूत्र में यथा शब्द द्वारा प्राप्त कर सकते हैं।

इस शङ्का के समाधान में काशिकाकार व पदमञ्जरीकार का मत है कि अव्ययं विभक्ति ... सूत्र में सादृश्य अर्थ यथा शब्द के द्वारा गृहीत है, अतः असादृश्य (योग्यता, वीप्सा, पदार्थानतिवृत्ति और सादृश्य से भिन्न) अर्थ में शक्त जो यथा शब्द, प्रकृतसूत्र से उसी का समास हो, अन्य का नहीं – प्रकृतसूत्र से ऐसा नियम होगा।[27]

हरदत्त की अपेक्षा प्रदीपकार ने इसे विस्तृत रूप से स्पष्ट किया है। उनका मत है कि यथाऽसादृश्य सूत्र में वीप्सावाची अव्युत्पन्न प्रातिपदिक का ग्रहण है,[28] एवं अव्ययं विभक्ति ... सूत्र में यद् प्रातिपदिक से थाल् प्रत्ययान्त व्युत्पन्न प्रातिपदिक का ग्रहण है। प्रदीपकार ने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि अव्ययं विभक्ति सूत्र के द्वारा व्युत्पन्नप्रातिपदिक थाल्प्रत्ययान्त यथा शब्द का सादृश्य अर्थ में शक्त होने पर ही समास होगा, जबकि प्रकृतसूत्र में योग्यता, वीप्सा पदार्थानतिवृत्ति अर्थ में शक्त अव्युत्पन्न प्रातिपदिक का समास होगा।[29]

इस प्रकार समास के सूत्रों का तुलनात्मक पर्यालोचन करने से विदित होता है कि दोनों ग्रन्थकारों ने पृथक्-पृथक् दृष्टिकोण के आधार पर स्वबुद्धि से स्वमत को उद्धृत किया है। जहाँ एक ओर हरदत्त काशिकाकार के पक्ष पोषण में लगे हैं वहाँ दूसरी ओर कैयट भाष्यकार के पक्षपोषण में लगे हैं। दोनों के ही अपने-अपने तर्क हैं जिनमें किसी को भी अमान्य न हीं ठहराया जा सकता। हम कह सकते हैं कि समासविषयक चिन्तनों व निष्कर्षों को तर्कपूर्ण रीति से प्रस्तुत करने में हरदत्तमिश्र व कैयट की लेखनी सशक्त प्रतीत होती है। दोनों की समानता विषय की विवेचन की पद्धति को लेकर भी है। दोनों की विश्लेषण पद्धति प्रौढिमा को लिए हुए है। सम्भवतः इन दोनों ही आचार्यों के उपजीव्य आचार्य भर्तृहरि हैं परन्तु एक गम्भीर एवं विचारोन्मुखी दार्शनिक केवल किसी परम्परा को ही स्पष्ट नहीं कर रहा होता है। वह उनमें नूतन उद्भावनाएँ भी उपस्थापित कर रहा होता है। इस अर्थ में ये दोनों आचार्य अपने मन्तव्य में बहुत पृथक् भी है। व्याकरणशास्त्र को एवं भाषादर्शन को इनके अपने-अपने महत्वपूर्ण अवदान हैं।

संदर्भग्रन्थसूची:-

1 अष्टा. 2.1.6

2 अष्टा. 2.1.8

3 यावदवधारणे इत्यत्र यावच्छब्दोव्ययमेव संगृहीतः। तथा च यावन्त्यमत्राणीत्यनव्ययेन वाक्यं प्रदर्श्यते। अन्यथा नित्यसमा सत्वाद्वाक्यं न स्यात्। म.भा.प्र. 2.1.8

4 यावन्ति पात्राणीति। यावदित्यव्ययं चास्ति, तद्धितान्तं च विद्यते अतोनित्यसमासेऽपि तद्धितान्तेन विग्रहः। प.म. 2.1.8

5 अष्टा. 2.1.10

6 प.म. 2.1.10

7 (क) अक्षादयस्तृतीयान्ताः परिणा पूर्वोक्तस्य यथा न तत्।
(ख) अक्षशलाकयोश्चैक वचनान्तयोः।
(ग) कितवव्यवहारे च। म.भा.प्र. 2.1.10

8 अष्टा. 2.1.16

9 लक्षणेनत्यस्यानुवृत्त्या विनापीष्टासिद्धिं दर्शयति। उपमानोपामे य भावे चायं समास इष्यते। न्यूनगुणं चोपमेयं परिपूर्णगुणमुपमानं तत्र संपूर्णगुणसन्निधौ न्यूनगुणमसद्गुणमिव प्रतिभातीति सामर्थ्यात् प्रकर्षगतिर्विज्ञायते। प्रकृष्टाप्रकृष्टसन्निधौ च प्रकृष्टस्य कार्येण सम्बन्धो नेतरस्य। म.भा.प्र. 2.1.16

10 लक्षणेनेति वर्त्तत इति। अन्यथा आयामो गङ्गाया इत्यस्यार्थेऽनुग - ङ्गमिति स्यात्।प.म. 2.1.16

11 अष्टा. 2.1.28

12 काला इति पृथग्योगेन क्तान्तेन समासविधानं न कर्तव्यम्।काला अत्यन्तसंयोग इत्येक एव योगः कर्तव्यः। तत्र च क्तेनेत्यस्य निवृत्तत्वात् सर्वत्र समासः सिध्यतीति। म.भा.प्र. 2.1.28

13 इह काला अत्यन्तसंयोगे इत्येको योगः कर्तव्यः, तत्र क्तेन इत्यस्य निवृत्तत्वात्सर्वत्र समासः सिद्ध्यति, किमर्थं योगविभागे क्तान्तेन समासो विधीयत इत्यत आह – अनत्यन्तसंयोगार्थं वचनमिति। प.म. 2.1.28

[14] अष्टा. 2.1.31

[15] मिश्रग्रहणे सोपसर्गस्यापि ग्रहणम् गूडसंमिश्रा धाना इत्यर्थम्? ज्ञापकात्सिद्धम्, ' मिश्रं चानुपसर्गमसन्धौ' इत्यनुपसर्गग्रहणं करोति, तज्ज्ञापयति – मिश्रग्रहणे सोपसर्गस्यापि ग्रहणमिति। प.म. 2.1.31

[16] अष्टा. 2.1.34

[17] अष्टा. 2.1.35

[18] अष्टा. 2.1.48

[19] ये चात्र क्तान्तेन सह समासास्तेषां पूर्वेणैव सिद्धे पुनः पाठो युक्तारोह्यादि परिग्रहार्थः पूर्वपदाद्युदात्तत्वं यथा स्यादिति युक्तारोह्यादिषु हि पात्रेसमितादयश्चेति पठयन्ते। का. 2.1.48

[20] अष्टा. 2.1.24

[21] अष्टा. 2.2.1

[22] अष्टा. 2.2.2

[23] अष्टा. 2.2.3

[24] प.म. 2.2.2

[25] अष्टा. 2.1.6

[26] अष्टा. 2.1.7

[27] (क) यथार्थे यदव्ययमिति पूर्वेणैव सिद्धे समासे वचनमिदं सादृश्यप्रतिषेधार्थम्। का. 2.1.7
(ख) अथ पूर्वेणात्र सादृश्य इति वा यथार्थं इति वा कस्मान्न भवतीत्याह पूर्वेणैवेति। प.म. 2.1.7

[28] असत्येवेति। अर्थवत्सूत्रारम्भादव्युत्पन्नानामपि सम्भवोऽवगम्य ते। वीप्सावाचीति। वीप्साग्रहणमुपलक्षणं तेन योग्यतापदार्थानतिवृत्ती अपि यथार्थौ तस्येदमिति। सूत्रेऽस्मिन्नत्यर्थः। म.भा.प्र. 2.1.7

[29] अथ यः प्रकारवचने थाल् तस्य ग्रहणं कस्मान्न भवति? पूर्वेण प्राप्नोतिसादृश्यसंपत्ति इति। प्रतिषेधवचनसामर्थ्यान्न भविष्यति। म.भा. प्र. 2.1.7

- ***अष्टाध्यायी सूत्रपाठः***, पाणिनि, सं ब्रहमदत्त जिज्ञासु, श्री रामलाल कपूर ट्रस्ट बहालगढ़, सोनीपत, 2007
- ***काशिका,*** न्यासपदमञ्जरीभावबोधिनीसहिता, जयशंकरलाल त्रिपाठी, तारा बुक एजेंसी, वाराणसी
- ***काशिकावृत्ति,*** न्यासपदमञ्जरीसहिता, द्वारिकादास, प्राच्य भारतीय प्रकाशन, तारा पब्लिकेशन, वाराणसी, 1965
- ***काशिकावृत्ति,*** न्यासपदमञ्जरीसहिता, वामनजयादित्य, सं डॉ. जयशंकरलाल त्रिपाठी, डॉ. सुधाकर मालवीय, तारा प्रिन्टिंग वर्क्स, वाराणसी, 1985
- ***धातुपाठः,*** पाणिनि, रामलाल कपूर ट्रस्ट, सोनीपत, हरियाणा, 2010
- ***निरुक्त,*** यास्क, सं श्रीकान्त पाण्डेय, साहित्य भण्डार, मेरठ, 1985
- ***पदमञ्जरी,*** हरदत्तमिश्र, सं पुल्लेल श्रीरामचन्द्रुडु, विठलदेवुनी सुन्दरशर्मा, संस्कृत परिषद् , उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद, 1981
- ***महाभाष्य,*** पतञ्जलि, हिन्दी व्याख्या, पं युधिष्ठिर मीमांसक, रामलाल कपूर ट्रस्ट प्रेस, बहालगढ़, सोनीपत, 1979
- ***महाभाष्यम्,*** पतञ्जलि, सं. पं. शिवदत्त शर्मा, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, जवाहर नगर, दिल्ली, 1988
- ***महाभाष्यम्,*** पतञ्जलि, हिन्दी व्याख्या, डॉ. हरिनारायण तिवारी, चौखम्बा विद्याभवन. वाराणसी, 2009
- ***महाभाष्यदीपिका,*** भर्तृहरि, सं वी. स्वामीनाथन, भण्डारकर प्राच्य शोध प्रतिष्ठान, पूना, 1967
- ***व्याकरण महाभाष्यम्,*** ज्योत्सना समुद्भासितम्, टी. व सं., डॉ. हरिनारायण तिवारी, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2009
- ***वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी*** (बालमनोरमातत्त्वबोधिनीसहिता), भट्टोजिदीक्षित, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 1982